बुंदेलखंड विद्रोह में गनेश महतों और लुधियांत का योगदान

बृजेन्द्र कुमार लोधी*

सन् 1857 की कांति विश्व की सबसे बड़ी सशस्त्र कांति थी। कुछ सामाजिक कारणों एवं देश के गद्दारों के कारण यह कांति विफल हो गयी थी। इस कांति में सर्वस्व न्योछावर करने वाले तमाम जन समुदायों एवं उनके नायकों को इतिहास में वह स्थान नहीं मिला जिसके वे हकदार थे। 'हमारी गुलामी के इतिहास की यह सबसे बड़ी विडम्बना है कि जिन लोगों ने विदेशी शासकों के चरण चूमे वे तथा उनके उत्तराधिकारी राजा, महाराजा, जमींदार, और जागीरदार कहलाये किन्तु जिन लोगों ने स्वाधीनता की रक्षा हेतु क्रांति के यज्ञ कुंड में अपना सर्वस्व होम कर दिया, उनमें से अधिकांश का चिन्ह–चक्र भी ढूढ़ निकालना दुष्कर हो गया है। गोहांड (हमीरपुर) के गनेश महतों तथा उनके पिता अमर सिंह महतों ऐसे ही क्रांतिवीरों में से हैं।'[1] इतिहास कारों ने बिना क्षेत्रीय अध्ययन के केवल पुस्तकीय परिप्रेक्ष्य में अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किये परिणामतः वे स्वातंत्र्य समर के क्रांतिकारियों के साथ न्याय नहीं कर सके।

बुन्देलखंड का हमीरपुर–महोबा जनपद स्वातंत्र्य समर की पूर्व पीठिका के रूप में जाना जाता हैं किन्तु यहां पर चरखारी एक ऐसी रियासत थी, जिसके राजा रतन सिंह ने 1842 के बुन्देला विद्रोह से लेकर 1857 के समर तक देश के साथ भरपूर गद्दारी की और बदले में कंपनी सरकार का वरदहस्त प्राप्त किया था। चरखारी एक अजेय रियासत थी तथा उसका किला अभेद्य था। चरखारी बुन्देलखंड के मध्य में होने के कारण अपने स्थापना काल से ही विशेष भौगोलिक महत्व रखती रही है। चरखारी को जीतने का प्रयास बांदा के नवाब अलीबहादुर द्वितीय ने तथा नौने अर्जुन सिंह ने पूरी तैयारी से किया था किन्तु वे सफल नहीं हो सके थे। लेकिन गोहांड के लोधी वंश में जन्मे युवक गनेश महतों ने अपने भैया बंदी वाले गावों को संगठित कर एवं तांत्या टोपे को प्रेरित किया और चरखारी किले पर अपनी विजय पताका फहरायी थी। तभी से आज तक गोहांड वालों का किले में प्रवेश वर्जित है।

अमर सिंह महतों अत्यंत स्वाभिमानी, स्वातंत्र्य प्रिय, एवं साहसी व्यक्ति थे। उनका अपने भैया बंदी वाले गांवों में बहुत मान सम्मान था। उन्होंने 1841–43 के बुंदेलखंड विद्रोह में लुधियांत[2] के क्रांतिकारियों का नेत्रत्व किया था। परिणामतः कंपनी सरकार ने उन्हें विद्रोही घोषित कर दिया था। अमर सिंह महतों का कंपनी सरकार के विरुद्ध विद्रोह जीवन पर्यंत 1858 तक जारी रहा। 'सन् 1857 का विद्रोह स्वातंत्र्य समर इतिहास में प्रथम स्वतंत्रता–संग्राम के रूप में प्रसिद्ध है। लेकिन इससे भी 16 वर्ष पहले सन् 1841

---

*शोध छात्र, समाजशस्त्र, जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विरूवविद्यालय, चित्रकूट (उ. प्र.) 210204.

1 डा0 हरगोविंद सिंह, कादम्बिनी, अप्रैल 1972, लेख : 'एक विस्मृत लोधी कांतिवीर– गनेश महतों , पृष्ठ : 107 से 111

2 'झांसी की रानी' : महाश्वेता देवी, अनुवाद व संपादन, : डा0 रमाशंकर द्विवेदी, पृ. सं0 6 (बुंदेलखंड क्षेत्र में कुछ शब्द प्रचलित हैं जिनसे पता चलता है कि अमुक क्षेत्र में अमुक जाति वालों का अधिक निवास हैं जैसे लुधयांत। इसका अर्थ है जहां लोधीराजपूत क्षत्रिय अधिक निवास करते हैं। इसी से इस क्षेत्र की बोली को लुधयांती कहा जाता है)।

में वीर भूमि बुंदेलखंड में अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति का बिगुल बज गया था जो सन् 1843 तक जारी रहा। वह कंपनी सरकार को उखाड़ फैंकने का प्रथम संघर्षपूर्ण प्रयत्न था। यह 'बुंदेलखंड विद्रोह' बुंदेलखंड के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है, इसे बुंदेला विद्रोह भी कहा जाता है।– इस संग्राम में बुंदेला ठाकुरों के साथ–साथ लोधी तथा गौड़ जाति के राजा, जागीरदार, व जमींदारों की विशेष भूमिका थी। बुंदेलखंड के लोधी वीरों ने इसमें बड़ी संख्या में भाग लिया था।[1] बुंदेलखंड से अंग्रेजों को मार भगाने की योजना चरखारी रियासत के सूपा गांव में 1840 में बनी थी। यह योजना काशी के बुढ़वा मंगल मेले की तर्ज पर बनायी गयी थी। हुआ यह था कि सन् 1939 में बुंदेलखंड के कुछ राजा, राजकुमार एवं जमींदार काशी में होने वाले 'बुढ़वा मंगल' मेला देखने गये। वहां से प्रेरणा लेकर वे अग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह भावना भरने में लग गये। 'सूपा में चरखारी राज्य के पूर्व राजा मंडनशाह तथा विकटराय के वंशज लोधी जागीरदार निवास करते थे। सूपा के लोधी जमींदारों ने इस मेले का सारा उत्तर दायित्व संभाला। गोपनीय ढंग से बुंदेलखंड के अनेक राजा व जमींदारों से संपर्क किया गया। इस मेले में जैतपुर (महोबा) के बुंदेला राजा परीछत, हीरापुर के राजा हिरदेशाह महदेले, चिरगांव (झांसी) के राव बहादुर बखतसिंह, नाराट के जागीरदार मधुकरशाह बुंदेला, चन्द्रपुर के जागीरदार जवाहर सिंह बुंदेला, गोहांड (राठ) के जागीरदार अमर सिंह महतों, तथा क्षेत्र के लोधी एवं बुंदेला जमींदारोंने बड़ी संख्या में भाग लिया। सबने मिलकर गोपनीय रूप से अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष का निर्णय लिया। बुंदेला राजा पारीछत को विद्रोहियों का नेता चुना गया।[2]

सूपा सम्मेलन में चरखारी के राजा रतन सिंह भी शामिल हुये थे जो कि अंग्रेजों से मिले हुये थे। रतन सिंह राजा पारीछत के भतीजे थे उन्हीं ने कैंथा छावनी जाकर अंग्रेजों से सम्मेलन में उनके विरुद्ध बनी योजना का भेद बता दिया था।

कंपनी सरकार के विरुद्ध लुधियांत के किसानों में विद्रोह की भावना पनपने का सबसे बड़ा कारण यह था कि अंग्रजों ने उन पर कर (लगान) लगा दिया था। ' बुंदेलखंड में किसानों में एक वर्ग ऐसा था जो पूर्व के वंशज, कृपापात्र अथवा पूज्य होने के कारण उन्होंने कभी भी कोई सरकारी कर नहीं दिया था। अंग्रेजों के यह कर उन्हें अट पटे तथा आश्चर्यजनक लगे तब उन्होंने उसका खुला विरोध किया।[3] अमर सिंह महतों राजा पारीछत के घनिष्ठ मित्र थे। राजा पारीछत, महाराज छत्रसाल बुंदेला के पौत्र थे। ऐतिहासिक तथ्यों से ज्ञात होता है कि बुंदेलों एवं लोधियों में भ्रात्रवत संबंध रहे हैं। किन्तु अंग्रेजों की फूट डालो – राज करो की नीति ने न केवल लोधी – बुंदेला संबंधों को दरकाने की कोशिश की बल्कि बुंदेला राजा पारीछत के भतीजे रतन सिंह को चरखारी की गद्दी देकर देश का गद्दार और चाचा का शत्रु बना दिया। रतन सिंह द्वारा कांति की योजना का भेद खोलने के कारण अंग्रेज चौकन्ने हो गये थे, इसके बावजूद परीछत ने लोधियों की मदद से 1841 में कैंथा छावनी लूट ली और अपनी रियासत से अंग्रेजों का सफाया कर दिया।

महाराज छत्रसाल बुंदेला के प्रति लोधी जन प्राण पण से निष्ठावान थे। छत्रसाल बुंदेलखंड के सबसे प्रतापी राजा थे। ग्यारहवीं–बारहवीं शताब्दी में लोधी ठाकुरों के बुंदेलखंड में विस्त्रत और संपंन्न राज्य थे।[4] तथा कहा जाता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में काशी से प्रवजित हेमकर्ण नाम के क्षत्रिय से बुंदेला क्षत्रियों की नयी शाखा का अभ्युदय हुआ था। जबकि श्रवण कुमार त्रिपाठी कृत 'क्रांति पथ–1857 लोधी ठाकुरों एवं बुन्देलों

---

1 'राकेश' रतनपाल सिंह, लोधी दर्पण त्रैमासिक मार्च 2001, संपादक : डा0 राम कृष्ण राजपूत।

2 – वही – पृष्ठ– 8

3 त्रिपाठी श्रवण कुमार , कांतिपथ–1857 (लोधी ठाकुरों तथा बुंदेलों के बलिदानों पर आधारित) , पृष्ठ–15

4 त्रिपाठी श्रवण कुमार , कांतिपथ–1857 , पृष्ठ–99

के बलिदानों पर आधारित' ग्रंथ में उद्धृत है कि लोधियों में से ही बुंदेला क्षत्रियों की नयी शाखा निकली। लोधी एवं बुंदेलों के रीति–रिवाज तथा परंपरायें एक जैसी हैं। दोनों ही समुदाय की बोली 'लोधांती'[1] है। इसे 'लोधियों की बोली'[2] भी कहा जाता है। अमर सिंह महतों की तीन या चार पीढ़ी पहले के भैरव–भारती नाम के पूर्वजों ने गोहांड बसाया था। ये दोनों सगे भाई थे जो कि सरसई गांव के निवासी थे। अमर सिंह एवं गनेश महतों के वंशजों की छिटकी सरसई को पड़ती है। ''किस वंश का मूल स्थान कौंन–सा है इसके अध्ययन लिये बुन्देलखंड की 'छिटकी' प्रथा अत्यंत महत्व पूर्ण है। शादी–व्याह के अवसर पर इस प्रथा के अंतर्गत वंश के मूल स्थान का नाम लेकर उसके लिये निमंत्रण भेजने की भावना से अक्षत छोड़े जाते हैं।''[3] मंडन शाह एवं बंशिया शाह ने चरखारी बसायी थी। जबकि कुछ लोगों का मानना है कि– 'महाराजा छत्रसाल ने सन् 1720 में बंशिया शाह और मंडन शाह को यह इलाका जागीर के रूप में दिया था, दोनों ही लोधी राजपूत थे और और इनके नाम के स्मृति चिन्ह बंशियाताल और मंडनताल आज भी हैं।[4]

पुत्र कुंवर गनेश पांच–छः वर्ष के रहे होंगे तभी उनके पिता अमर सिंह महतों ने, बुंदेलखंड से अंग्रेजों को मार भगाने की गोपनीय योजना जो सूपा (चरखारी) में 1840 में बनी थी, में उत्साह पूर्वक भाग लिया था। इस गोपनीय योजना का भेद चूंकि चरखारी नरेश राव रतन सिंह ने ही अंग्रेजों को बता दिया था अतः महतों उनसे घृणा करने लगे थे। एक बार रतन सिंह ने महतों को यह प्रलोभन भिजवाया कि वे बगावत का विचार त्याग दें और राजा पारीछत का साथ छोड़ कर अंग्रेजों का साथ दें तो कंपनी सरकार महतों को सनद प्रदान करेगी। महतों राजा के इस प्रस्ताव पर क्रोधित हो गये और उन्हें भला–बुरा कह दिया। तभी से चरखारी नरेश, महतों को सबक सिखाने का अवसर खोजने लगे।

''एक बार अमर सिंह महतों अपनी घोड़ी पर सवार होकर कहीं जा रहे थे। मार्ग पर उन्हें राजा रतन सिंह की सवारी मिली। महतों ने न तो राजा को अभिवादन किया और न ही घोड़ी पर से ही उतरे। अपितु अपनी फुर्तीली घोड़ी को बढ़ाकर राजा के हाथी से आगे निकल गये। जनश्रुति तो यहां तक है कि मार्ग संकरा था अतः हांथी को ही छलांग कर घोड़ी निकल गयी। किन्तु लाक्षणिक रूप से यहां राज मर्यादा उल्लंघन अर्थ ही समीचीन प्रतीत होता है। अमरसिंह अपने जनपद के गणमान्य व्यक्तियों में से थे, रतन सिंह से उनका पूर्व परिचय भी था अतः राजा को यह समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई कि जानबूझ कर उनकी अवज्ञा की गई है। इस व्यवहार से वह बुरी तरह कुढ़ गया। राजा ने एक पत्र भेज कर महतों से अपनी भूल स्वीकार करने तथा क्षमा मांगने के लिये कहा। उत्तर में महतों ने एक पत्र भेजा कि मैने कोई गलती नहीं की है।''[5]

राजा रतन सिंह ने कैंथा छावनी जाकर अंग्रजों के प्रति अपनी वफ़ादारी का हवाला देकर उनकी सेना तथा अपनी सेना लेकर गोहांड पर आक्रमण कर दिया। सेना ने रात में चढ़ाई की थी। गोहांड से पूरब की ओर दो कि0मी0 दूर बरसाती नाला के पास सेना ने पड़ाव डाला था। तभी से इस स्थान को लश्कर कहा जाने लगा। 'गोहांड वालों ने इसका कुछ पूर्वाभास पाकर सारे स्त्री बच्चों को गांव से बाहर सुरक्षित स्थानों पर भेज दिया था। राजा की तोपों का सामना करने योग्य तैयारी यहां कहां थी, फिर भी धैर्य और सूझ–बूझ से काम लिया गया। गांव के लोगों की राय के अनुसार इमली

---

1 ग्रियर्सन जी0ए0, लिग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया, खंड–1 पृष्ठ–465

2 हमीरपुर (उ0प्र0) गजेटियर, पृष्ठ–61

3 डा0 हरगोविंद सिंह, मामुलिया, अंक आठ, सं0 2039, पृष्ठ–111,

4 अरजरिया रवीन्द्र, खूबसूरत अतीत का धनी चरखारी, कुबेर टाइम्स : रविवार 21 सितंबर 1997

5 डा0 हरगोविंद सिंह, कादम्बिनी, अप्रैल 1972, लेख : 'एक विस्मृत लोधी क्रांतिवीर– गनेश महतों , पृष्ठ : 107 से 111

के दो मोटे तनों को खोखला कर के तोपें बनायीं गयी थीं, उन्हीं से गोले दाग दिये गये, आक्रमण कारी सहमे थे अतः गांव में घुसने का साहस नहीं किया'।[1] लेकिन बौखलाहट में उन्होंने रात में ही लुधियांत के 'महजौली गांव' में आग लगा दी।

महजौली गांव में आग लगाने के बाद राजा रतन सिंह की सेना ने गोहांड के पश्चिम में घेरा डाल दिया। जिगनी रियासत का परिहार राजा भी ईर्ष्यावश लोधियों से विद्वेश रखता था अतः रतन सिंह के उकसाने पर उसने भी अपनी रियासतके कुछ लोगों को गोहांड लूटने के लिये भेज दिया। वास्तव में चरखारी के राजा की भांति जिगनी का राजा भी अंग्रेजों का मित्र था और चरखारी के राजा के निरंतर संपर्क में रहता था। जिगनी रियासत गोहांड के अधिक पास थी अतः वह ब्रिटिश विद्रोही गोहांड की खुफिया सूचनायें एकत्रित कर चरखारी के राजा को देता रहता था। यद्यपि महाश्वेतादेवी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यास 'झांसी की रानी' में लिखा है कि जिगनी का राजा कहने भर को ही अंग्रेजों का मित्र था। उसी ने छिपकर ठाकुर मर्दन सिंह, बखतबली को गाड़ी, घोड़ा, खाद्य सामग्री और धन देकर सहायता की।[2] कुछ भी हो कुछ राजा स्वार्थ्य वश दोहरी भूमिका रहे थे। गुप्त अयोद्या प्रसाद, 'लोक संस्कृति में बुन्देलखंड के इतिहास प्रसंग' में उद्धृत है कि जिगनी रियासत के सैनिक बिलासी व चरित्र भृष्ट हो गये थे जिसके कारण रियासत का पतन हो गया। गोहाण्ड से लूटा गया विशाल दरवाजा आज भी जिगनी के किला में विजय प्रतीक व साक्ष्य के रूप में रखा है।

अब गोहांड के पश्चिम में चरखारी की सेना, कैंथा छावनी की सेना तथा जिगनी के राजा के लोग आक्रमण तथा लूट के लिये उत्सुक थे। गोहांड वाले भी पूरी तैयारी के साथ चप्पे–चप्पे पर तैनात थे। गोहांड के मध्य में पहाड़ी पर एक गढ़ी है, इसी में चांदों का प्रसिद्ध मंदिर है। इस गढ़ी से गांव का पूरा दृश्य साफ–साफ देखा जा सकता है। चांदो के मंदिर में एक सिद्ध महंत रहते थे। संयोग से गढ़ी में एक विशाल बृक्ष उसी दिशा की ओर झुका हुआ था जहां चरखारी की संयुक्त सेना ने घेरा डाला हुआ था। मंहत ने उसी बृक्ष के तने को खोखला करवा कर तोप बनवायी और बारूद भरवाकर दगवा दी। तोप का गोला भयंकर आवाज के साथ सेना के सामने गिरा। गोला इतना अधिक शक्तिशाली था कि धरती कांप गयी, शत्रु सेना के सामने धूल के बादल छा गये। शत्रु सेना भयाक्रांत थी अब सेना आगे बढ़ने का साहस नहीं जुटा पा रही थी। इस मोर्चे पर ब्राह्मण बहादुरी से डटे हुये थे। राजा ने युक्ति से काम लिया। कहा जाता है कि उसने गोहांड के ब्राह्मणों को ससम्मान नारियल व जनेऊ के साथ स्वर्ण मुद्रायें भेंट कीं। प्रलोभन बस गांव का एक ब्राह्मण जो अमर सिंह महतों से विद्वेश रखता था, आक्रमण कारियों से मिल गया और उसने यह भेद बता दिया वहां कोई तोप–ओप नहीं हैं वे तो इमली के खोखले तने थे जो एक बार गोले दागते ही फट गये हैं। उसने अमर सिंह महतों के घर तक पहुचने का वह निष्कंटक मार्ग भी बताया जहां क्रांतिकारियों से मुठभेड़ का कोई खतरा नहीं था।

यह वह सुरक्षित मार्ग था जो पहाड़ के किनारे से होते हुये गांव के भीतर जाता था। आगे चढ़ाई पर यह एक संकरी व घुमावदार गली में बदल जाती है। यहां मुठभेड़ का कोई खतरा इसलिये भी नहीं था क्योंकि यहां केवल तीन किन्नर छोटे इमाम बाड़े में रहते थे। भला किन्नरों से राजा की फौज को क्या खतरा हो सकता था। इसी गलतफहमीं में सबसे पहले अंग्रेजों की कैंथा छावनी के घुड़ सवार सैनिक निश्चिंत होकर आगे बढ़ने लगे। गली इतनी संकरी थी एक बार में केवल एक घुड़ सवार आगे बढ़ पा

---

1 —— वही ——

2 महाश्वेता देवी, झांसी की रानी, पृष्ठ : 214

रहा था और घुमाव ऐसा कि पीछे वाला घुड़ सवार आगे वाले को देख नहीं पाता था। आगे जो घट रहा था वह बेहद हैरत अंगेज था ! दरअसल जैसे ही घुड़ सवार इमाम बाड़ा के सामने पहुचता, सुन्दर नाम का किन्नर पलंग की मजबूत पाटी से जोर से सैनिक के सिर पर मार कर गिरा देता था। और रज्जब व सुभानी किन्नर, सैनिक को घसीट कर इमाम बाड़े के भीतर खुले खौड़ा (खत्ती) में डालते जाते थे। अंग्रेज कप्तान ने इमाम बाड़ा के पीछे वाले पहाड़ से देखा तो दंग रह गया। उसने देखा कि गली में तो घुड़ सवार प्रवेश करता है किन्तु आगे केवल घोड़ा सरपट दौड़ा जाता है। जब उसने पहाड़ पर थोड़ा दायें बायें बढ़ कर देखा तो होश उड़ गये। कप्तान ने तत्काल बंदूक से फायर किया और सुन्दर वहीं ढेर हो गया शेष दो किन्नर रज्जब एवं सुभानी की गर्दन तलवार से काट दी गयी। इस प्रकार तीनों किन्नर वीरगति को प्राप्त हो गये। इस घटना क्रम में किन्नरों ने अठारह सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया था। गोहांड के लोग आज भी उन किन्नरों की बहादुरी की चर्चा बड़े रोचक ढंग से करते हैं। महतों एवं गोहांड की आन बान शान की रक्षा के लिये किन्नरों का पराक्रम और उनकी शहादत सदैव स्मरणीय रहेगी। उनका यह शहीदी स्थल भी किन्नर समुदाय के लिये तीर्थ स्थान से कम नहीं हैं।

उस घटना क्रम को ब्राह्मण महंत चांदों के मंदिर से देख रहे थे, वे ब्राह्मणों की गद्दारी से इतने अधिक आहत व कुपित हो गये कि उन्होंने अभिशाप दे दिया कि तुम्हारी बस्ती में सुअर फिरेंगे। और वास्तव में वह बस्ती वीरान हो गयी तथा वहां अजकल सुअर टहलते रहते हैं। संभवतः सामाजिक बहिस्कार के कारण ब्राह्मण अन्यत्र जा बसे हों या महंत के अभिशाप के कारण विनष्ट हो गये हों।

चरखारी एवं अंग्रेजों की संयुक्त सेना गोहांड में भरपूर लूट–पाट की, घरों को उजाड़ा गया, जलाया गया। सेना को इतनी सटीक जानकारी दी गयी थी कि महतों किस मकान में सबसे अधिक सोना–चांदी व बहुमूल्य संपदा है। यह बखरी (आंगन युक्त भवन) बीचों बीच चारों ओर से अन्य बखरियों से घिरी हुयी थी। सबसे पहले इसी मकान को लूटा गया, जलाया और उजाड़ा गया। यह बखरी आज भी खंडहर के रूप में देखी जा सकती है। इस बखरी में गनेश महतों के प्रपौत्र जिया लाल महतों, जिनकी आयु सौ वर्ष से अधिक हो चुकी है, अपने परिवार के साथ रह रहे हैं। जिया लाल महतों के अनुसार जब वे 18 वर्ष के थे तब 105 वर्षीय बृद्धा (पंचा कक्का की मां) अपनी आंखों देखा हाल बतातीं थीं कि किस बे रहमीं से चरखारी की सेना ने गांव में आक्रमण कर लूट–पाट की थी। गोहांड के लोग बहुत बहादुरी से लड़े, स्त्रियों ने भी बढ़ चढ कर हिस्सा लिया। चरखारी के बहुत से सैनिक हताहत हुये। लोग बताते हैं कि अधियात मुहाल की एक महिला ने गड़ासे से चार सैनिकों को काट डाला था किन्तु सैनिकों के खून से लथ–पथ उसके पैरों के निशान से उस वीरांगना की पहचान हो गयी और उसका कैंथा छावनी के अन्य सैनिकों ने कत्ल कर दिया।

''आक्रमण कारियों ने जो कुछ पाया , लूटा खसोटा तथा मकानों को जलाया। अमर सिंह को बंदी बनाकर सैनिक चरखारी ले गये। राजा ने क्षमां मांगने तक के लिये उन्हें कारागार में बंद रखने का आदेश दिया। रतन सिंह के सैनिकों ने गोहांड से लौटते हुए, मार्ग में कुछ अन्य ग्रामों को लूटा, जिनमें 'बसेला' भी एक था। अमर सिंह विक्रमीं संवत् 1914 के भाद्रपद मास में बंदी बनाये गये थे। पित्र पक्ष में ब्राह्मणों भोजन कराये बिना तथा बिना दान दक्षिणा दिये महतों भोजन नहीं करते थे, इस नियम की व्यवस्था के लिये उनकी धर्म पत्नी चरखारी पहुंची। इस पर राजा ने महतों से पूंछा क्या तुम्हारे कोई पुत्र नहीं है, जो घरवाली को यहां आना पड़ा ?''[1]

---

[1] डा0 हरगोविंद सिंह, कादम्बिनी, अप्रैल 1972, लेख : 'एक विस्मृत लोधी क्रांतिवीर– गनेश महतों , पृष्ठ : 107 से 111

''अभी तक तो मैं यही समझता था मेरे गनेश नाम का एक पुत्र है, किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि वह गनेश नहीं गनिशिया (पुत्री) है। महतों का निराश उत्तर भी दर्प पूर्ण था। गोहांड लौटकर अमर सिंह की पत्नी ने अपने पुत्र को फटकारा तुम्हारा बाप जेल में सड़ रहा है और तुम चैन से सो रहे हो। राजा तुम्हारी हंसी उड़ा रहा है तुम्हें शर्म नहीं आती ? गनेश ने उत्तर दिया। मां मैं चैन से नहीं बैठा हूं मुझे न नींद आती है और न ही खाना पीना अच्छा लगता है। किन्तु क्या करूं कोई उपाय नहीं सूझता। तुम्हारे विश्वास के लिये मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि यदि मैं अमर सिंह का असल बेटा हूं तो जब तक पिताजी को कैद से न छुड़ा लूंगा तब तक घर के अंदर पैर न रखूंगा। गनेश घोड़ी पर सवार हुआ और तत्काल घर से निकल पड़ा।''[1]

दृढ़ प्रतिज्ञ गनेश ने अपने भइया – बंदी वाले गांवों (लुधियांत) में दौड़–धूप आरंभ की। गोहांड और रिहुंटा गांव में तो उत्साह पूर्वक भविष्य में सदैव के लिये भाई–भाई का रिस्ता निभाने का दृढ़ संकल्प लिया गया। भाई–भाई का रिस्ता बनजाने के कारण इन दोंनों गावों के बीच विवाह नहीं होते हैं। अन्य बारह गांवों के लोग भी तन, मन, धन, गनेस महतों के साथ हो गये। वैसे भी अमर सिंह महतों की गिरफ्तारी से सभी लोग आक्रोषित थे। सबसे परामर्श करने के उपरांत गनेश अपनी प्रसिद्ध घोड़ी तथा एक जोड़ी सोने के कड़े लेकर कालपी चल पड़े। लुकते–छिपते वहां पहुंचे और तांत्या टोपे से मिले। घोड़ी और कड़े उपहार स्वरूप अर्पित किये। तांत्या टोपे नव युवक गनेश के व्याक्तिव से बहुत अधिक प्रभावित हुये। सन् 1842 के बुंदेल खंड विद्रोह में अमर सिंह महतों एवं लुधियांत के क्रांति वीरों के योगदान से वे पहले से अवगत थे। गनेश अपने पिता अमर सिंह की ही भांति अत्यंत साहसी तथा स्वाभिमानी प्रकृति के थे, जो स्वाभिमान की रक्षा के लिये सबकुछ खोने के लिये तैयार रहते थे। तांत्या टोपे को ऐसे ही क्रांति वीरों की तलाश थी जो ब्रिटिश हुकूमत की ईंट से ईंट बजा दें। गनेश से मिलने के बाद तांत्या टोपे ने नाना साहब पेशवा से चरखारी पर आक्रमण करने का आदेश ले लिया। गनेश महतों ने–''तांत्या के साथ चरखारी पर आक्रमण की योजना बनायी और उन्हें विश्वास दिलाया कि सेना की रसद की व्यवस्था की जायेगी तथा चरखारी से मिलने वाली सम्पत्ति एक लाख रुपये से कम न होगी। तात्या निश्चित तिथि पर गोहांड आये। उनके स्वागत की तैयारी पहले से थीं कई मील से उनकी अगवानी के लिये लोग उपस्थित थे। सजे हुये विशाल हाथी पर तात्या को आसीन करा कर तथा सैनिकों को पुष्प मालायें पहनाकर गांव लाया गया। गांव में स्थान–स्थान पर रसोई के लिये बड़ी–बड़ी कढ़ाइयां चढ़ गयीं। रास्ते के लिये भी भोजन की पूरी तैयारी कर ली गयी, मसूसा, भुने चने, सेव, खुरमे आदि सामग्री सग्गड़ों मे भर–भर कर पहले से रवाना कर दी गयी। एक रात विश्राम करने के पश्चात तांत्या की सेना के साथ गोहांड तथा गनेश महतों की भइया–बंदी के ग्रामों के जवानों ने अश्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित होकर चरखारी के लिये कूच कर दिया। ग्राम बरहरा के भी एक जत्थे ने गोहांड का साथ दिया जिसके नायक गंगाधर महतों थे। प्रत्येक पड़ाव पर दल के भोजनादि की सुंदर व्यवस्था मिली। चरखारी के बाहर एक पहाड़ पर क्रांतिकारी मोर्चा लगा। उस समय के सरकारी प्रपत्रों से पता चलता है कि जनवरी सन् 1858 के अंत में यह घेरा डाला गया था। चरखारी के आस–पास के कुछ गांव रतन सिंह से चिढ़ते थे। वहां के लोगों ने क्रांतिकारी दल का साथ दिया। पहरेता गांव उनमें से एक था। जहां के जत्थे के प्रमुख मनराखन सिंह कायस्थ थे। चरखारी में इस दल का रण कौशल अत्यंत उच्च कोटि का था। एक दल के शिथिल होते ही दूसरा दस्ता उनका स्थान लेने को तुरंत जा पहुंचता था। किसी सैनिक के हताहत होते ही उसको उठाकर लेजाने के लिये डोली तैयार रहती थी। रसद

---

1 युगनिर्माण योजना, लेखः 'महतों परिवार– जो अनीति से जूझ पड़ा' , सितंबर 1972

ठीक समय पर पहुंचती थी क्रांतिकारी दल की इस सुव्यवस्था को तत्कालीन अंग्रेज अधिकारियों के पत्रों में मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया गया है।[1] सारे प्रबंध का मूल श्रोत था–बहुमूल्य जन सहयोग। क्रांति के कप्तान तात्या टोपे को यहां तन मन धन जन सामान्य का समर्थन प्राप्त था। यहां स्वयम् जनजागरण ने क्रांति नेता का आवाहन किया था। सचमुच यह असल जनक्रांति थी, क्या भारत के उस स्वतंत्रता संग्राम ऐसी मिसाल कहीं और भी है ?[2] चरखारी के इस घेरे ने अंग्रेजों को इतना हैरान कर दिया था कि अंग्रेज सेनापति ने ह्यूरोज को झांसी छोड़ कर चरखारी की सहायता के हेतु पहुंचने का आदेश दिया। किंतु ह्यूरोज इस आदेश का पालन नहीं कर सका (देखिये सूचना विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा प्रकाशित संघर्षकालीन नेताओं की जीवनियां प्रष्ठ 91–92)। राजा से अश्रद्धा होने के कारण बहुत से पुराने सैनिक और सरदार क्रांतिकारियों से आ मिले। तात्यां की तोपों ने भयंकर मार की गोलंदाज ने चरखारी किले की तोप तोड़ दी तो हर्षोत्फुल्ल होकर तात्या ने उसके हाथों में सोने के कड़े पहना दिये। से वही कड़े थे जिन्हें तात्या से पहली भेंट के समय गनेश महतों ने भेंट स्वरूप अर्पित किया था। सरकारी अभिलेख के अनुसार 1 मार्च सन् 1858 तथा जनश्रुति के अनुसार फाग के दिन अर्थात चैत बदी 2 सं0 1914 वि0 को चरखारी का किला क्रांतिकारियों के अधिकार में आ गया। क्रांतिवीर गनेश ने अपने पिता को मुक्त किया। चौबीस तोपों सहित खजाने के तीन लाख रुपये पेशवा सेनाध्यक्ष तात्या टोपे को ससम्मान समर्पित किये गये। जिस पहाड़ पर से उस मोर्चे ने विजय प्राप्त की थी। वह रनजीता कहलाया और आज तक इसी नाम से पुकारा जाता है। चरखारी का प्रबंध कुछ दिन करने के बाद तात्या टोपे कालपी लौट गये। उनके जाने के पश्चात अंग्रेजी सेना की सहायता से रतन सिंह ने फिर चरखारी को वापस प्राप्त कर लिया।[3]

गोहांड में प्रयोग की गयी लकड़ी की तोप का प्रयोग चरखारी में दोहराया गया था। इमली की सैकड़ों तोपों से किले पर लगातार गोले दागे गये थे। किले का वह बुर्ज अभी कुछ वर्ष पूर्व तक टूटा पड़ा रहा जिसे गनेश महतों की तोपों से तोड़ा गया था। राजा ने प्रण किया था कि जब तक मैं गोहांड पर दुबारा चढ़ाई कर किले की ईंट वापस नहीं ले आऊंगा, बुर्ज की मरम्मत नहीं कराऊंगा। लेकिन राजा अपना प्रण पूरा नहीं कर सका। अब सरकार ने किले की सुरक्षा का दायित्व सेना को सौंप दिया है। तथा सेना ने किला की मरम्मत भी कर दी है। गनेश महतों ने राजा का मान मर्दन करने के लिये किले की ईंट को ले जाकर अपने मकान के पड़नाला में लगवा दिया था। जो आज भी लगी है। गोहांड एवं लुधियांत के अन्य बारह गांवों में फाग एक दिन बाद मनायी जाती है क्यों कि फाग के दिन गोहांड एवं लुधियांत के क्रांतिकारी चरखारी विजय में व्यस्त थे। वे नारा लगा रहे थे हमें पलासी का बदला लेना है (सौ साल पहले सन् 1757 में

---

[1] जे0एच0 कार्ने ने, जो वहां (चरखारी में) असिस्टेंट मजिस्ट्रेट था, भारत के गवर्नर–जनरल को लिखा था कि "The enemy conducted all their operations very systematically. They could afford their relief parties; while some fought others rested; as one set was observed going away, another wae seen coming to take their Places even during the continuance of the conflict. The had their bugle calls during the last grand assault, and each separate band of matchlock men was led on and performed its assigned task under the tution evidently of some of the smartest sepoys who had been instructed by us in the art of war. They had their hospital dolies and they appeared to have large well-regulated bazaar, with abundance of supplies. They in short displayed all the active energies of the battle-field." (संघर्ष कालीन नेताओं की जीवनियां, पाद टिप्पणी पृ0 107–08)

[2] युगनिर्माण योजना, लेखः 'महतों परिवार– जो अनीति से जूझ पड़ा' , सितंबर 1972 पृ0 59–61

[3] डा0 हरगोविंद सिंह, कादम्बिनी, अप्रैल 1972, लेख : 'एक विस्मृत लोधी क्रांतिवीर– गनेश महतों'

अंग्रेजों ने भारतीयों को पलासी में पराजित कर देश को गुलाम बनाना शुरु किया था), तात्पर्य यह कि यह युद्ध गोहांड बनाम चरखारी की क्षेत्रीय भावना तथा प्रखर राष्ट्रवाद की संयुक्त भावना के साथ लड़ा गया था। क्रांति वीर गनेश महतों के सम्मान में प्रत्येक वर्ष दीपावली पर बारह गांवों के लोग अत्यंत मनोहारी दिवारी नृत्य तथा आयुध कला का प्रदर्शन चांदों के मंदिर एवं महतों के फाटक पर करते हैं। सन 1858 से ही बारह गावों की एकता प्रदर्शन आज भी जारी है। इसी तरह फाग की टोली भी होली के दूसरे दिन फाटक पर होली खेलते व फागें गाते हैं। मुसलमान बंधु भी मुहर्रम पर शानदार आकर्षक ताजिये बहुत देर तक फाटक द्वार पर रखते हैं जिसमें हिन्दू बड़ी संख्या में भाग लेते हैं। ये समस्त गतिविधियां क्रांति वीर गनेश के प्रति श्रद्धा व सम्मान तथा पारंपरिक एकता प्रदर्शित करतीं हैं।

'' अमर सिंह महतों तथा गनेश बहुत दिनों तक फरार रहे। वे तात्या टोपे के साथ ग्वालियर तक रहे। 19 जून 1858 को ग्वालियर की पराजय के पश्चात वे इधर उधर लुके – छिपे रहे। इस बीच उनकी सारी जायदाद जब्त कर ली गयी। मकान नीलाम हुआ जिसे, एक मारवाड़ी ने खरीदा, किन्तु ग्रामवासियों का भर्त्सना के कारण वह उसका उपयोग न कर सका। सारी ग्रहस्थी पहले ही लूट–पाट और अग्निकांड की भेंट चढ़ गयी थी। बचा खुचा धन चरखारी आक्रमण के प्रबंध में व्यय हो गया था। करीब 739 (सात सौ उनतालीस) बीघे भूमि उनके पास थी, वह सारी की सारी हांथ से चली गयी। उनकी यह अचल संपत्ति किन महानुभाव के पास किस प्रकार पहुंची यह रोचक खोज का विषय हैं।[1] 1नवंबर 1858 को महारानी विक्टोरिया की घोषण होने के पश्चात अमर सिंह तथा गनेश महतों अपने गांव लौट आये और शांतिपूर्वक रहने लगें संपत्ति विहीन होने पर भी अपनी जन्म भूमि में उनका संम्मान पूर्ववत था। दो–तीन माह ही घर पर रह पाये होंगे कि सन् 1859 के आरंभ में अमर सिंह महतों का स्वर्गवास हो गया। ''[2] ग्वालियर में मिली पराजय के बाद तांत्या टोपे के आग्रह पर अमर सिंह एवं गनेश गोहांड चले आये थे। अब अंग्रेजों का दमन चक्र हमीरपुर जनपद के लुधियांत के प्रत्येक गांव पर चला। उनके गांव के गांव उजाड़े व जलाये गये। लोधी लड़ाके बहुत बहादुरी से अलग–अलग लड़े किन्तु वे अंग्रेजों की संगठित फौज के आगे सफल नहीं हो सके। इससे पहले की गनेश महतों अपने लुधियांत के क्रांति कारियों को पुनः संगठित कर पाते उनके पिता अमर सिंह महतों का देहांत हो गया।

गनेश महतों काफी दिनों तक जीवित रहे। वे विरक्त स्वभाव के हो गये थे। घर के काम काज से विल्कुल उदासीन रहते थें निवास स्थान के समीप एक मंदिर में उनका अधिकांश समय भजन–पूजन मे व्यतीत होता था। बच्चों को प्यार करते थे, चाहे जिस जाति का बच्चा रास्ते में मिल जाये उसे गोद में उठा लेते थे। जिस मार्ग पर वे निकलते बालक प्यार से बप्पा– बप्पा करते हुये उनके पीछे हो लेते थे। जितने पैसे महतों के पास में होते उन सबकी मिठाई खरीद कर वह बच्चों में बांट देते थे। खेद है कि ऐसे उदार चेता क्रांतिवीर का उनके गांव में अभी तक एक छोटा सा भी स्मारक नहीं बन सका।''[3] स्वातंत्र्य प्रिय स्वाभिमानी गनेश केवल विदेशी शासन के विरोधी व विद्रोही ही नहीं थे अपितु उस दौर में जब सारा समाज जाति गत ऊंच–नीच की भावना से ग्रस्त था, वे समता मूलक समाज के इतने प्रबल पक्षधर थे कि मृत्यु के पहले कह गये थे कि मेरी चिता उस स्थान पर जलायी जाय जहां से सतऊ जात के लोग गुजरते हों। यह वह दौर था जब लोधी अभिजनों के दरवाजे के सामने से छोटी जाति के लोग उपानह

---

[1] अमर सिंह महतों की इस भूमि की जमींदारी अंग्रेजों ने गहरौली (हमीरपुर) के गुरदेव ब्राह्मण को सौंप दी थी।

[2] डा0 हरगोविंद सिंह, कादम्बिनी, अप्रैल 1972, लेख : 'एक विस्मृत लोधी क्रांतिवीर– गनेश महतों'

[3] युगनिर्माण योजना, लेखः 'महतों परिवार– जो अनीति से जूझ पड़ा', सितंबर 1972

(जूता–चप्पल पहने बिना) ही निकलते थे। लेकिन गनेश को अभिजन होने का भी उन्हें कोई घमंड नहीं था इसलिये उन्होंने अपना कोई स्मारक आगामीं सौ वर्ष तक न बनाये जाने का निर्देश दिया था। जबकि उनके पूर्वजों के स्मारक झनक पुर में बने हुये हैं। निर्देश के अनुसार उनकी चिता गोहांड के बाहर एक सार्वजनिक तिराहे पर जलायी गयी थी, जहां से सभी जाति धर्म के लोग गुजरते हैं। इस प्रकार कांतिवीर गनेश की चिता भस्म का प्रत्येक कण लोगों के पैरों तले आकर इस देश की माटी में समाविष्ट हो गया। गनेश का प्रारंभिक नाम कुंवर गनेश सिंह था। कुवंर एवं सिंह जैसे अभिजन सूचक संबोधन उन्हें पसंद नहीं थे। अतः उन्हें गनेश महतों कहा जाने लगा था।

चरखारी विजय का सारा श्रेय इतिहास कारों ने तांत्या टोपे को दिया है। वास्तविकता यह है कि तांत्या टोपे चरखारी के अलावा सभी जगह पराजित हुये थे। उन्हें कालपी, कोंच, जालौंन को भी विजित करने का दायित्व नाना साहब ने सोंपा था जहां वे पराजित हो गये थे। 'व्यक्तिगत रूप से तात्या टोपे एक असाधारण गुरिल्ला योद्धा था।[1] उनकी रण नीति का भी कोई मुकाबला नहीं था लेकिन स्वातंत्र्य समर में सम्मिलित कोई भी राजा तथा उनके वेतन भोगी सैनिक तांत्या टोपे के नेत्रत्व में पूर्ण निष्ठा से नहीं लड़ सके। क्योंकि वे तांत्या को उच्च कुल का नहीं मानते थे। उनके रण कौशल का पूरा उपयोग क्रांति वीर गनेश ने किया और वे चरखारी पर विजय प्राप्त की। बाद में हर जगह मिली पराजय से तांत्या टोपे समझ चुके थे कि केवल वेतन भोगी सैनिकों के बलबूते कोई युद्ध जीतना मुश्किल है। बुन्देलखंड चप्पे–चप्पे में इतिहास है जिसे जानने के लिये नये शेाध–बोध की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से इतिहास लेखन राजाओं के गौरव गान एवं महिमा मंडन तक सीमित रहा। बहुत से राजा जो मजबूरी में स्वातंत्र्य समर में कूदे थे। वे स्वतंत्रता संग्राम की विफलता के बाद ब्रिटिश हुकूमत से क्षमां याचना करते रहे, यहां तक कि उन्होंने बहुत से क्रांतिकारियों को धोखे से पकड़वाकर फांसी लगवायी। ताकि ब्रिटिश हुकूमत उन्हें माफ कर दे। किंतु क्रांति वीर अमर सिंह एवं गनेश महतों ने अंग्रेज भक्त राजा रतन सिंह से क्षमां मांगने के बजाय उसके दर्प को चकना चूर कर दिया।

विभिन्न जन समुदाय (जातियां) भारत की मूर्त सच्चाई है, इनके अपने अलग–अलग जीवन मूल्य व सांस्कृतिक विविधतायें हैं। अधिकांशतः स्वातंत्र्य प्रिय स्वाभिमानी समुदाय रहे हैं। बुन्देलखंड में लोधी राजपूत उनमें से एक है, जिनके त्याग एवं बलिदान के बारे में भारतीय इतिहास कारों ने भले ही बहुत कम लिखा हो किन्तु अंग्रेजों ने इनकी स्वाभिमानी एवं लड़ाकू प्रवृत्ति का जिक्र अवश्य किया है। महारानी विकटोरिया द्वारा भारत का शासन अपने हांथ में लेने के बाद भी जब इनका ब्रिटिश विद्रोह शांत नहीं हुआ तो इन्हें क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट 1871 के अंतर्गत प्रजाति गत रूप से जन्मनः अपराधी अधिसूचित कर दिया गया। अपना गांव छोड़ कर कहीं अन्यत्र जाने पर प्रतिबंध लगाये जाने के कारण क्रांति कारी पुनः संगठित नहीं हो सके। किन्तु ''महतों परिवार का यह उत्सर्ग व्यर्थ नहीं गया। अंग्रेजों को भारत छोड़ कर जाना ही पड़ा। रतन सिंह ने जिस स्वार्थ के वशीभूत अनीति का मार्ग पकड़ा वह स्वार्थ का साधन राज्य भी स्थाई न रहा। उल्टे उसे करोड़ों देशवासियों की घृणा का पात्र बनना पड़ा। वह राज्य और संपदा पुनः देश की संपदा ही रही। अमर सिंह और गणेश महतों अपने इस सुकृत्य के द्वारा करोड़ों देश वासियों के श्रद्धा के पात्र ही नहीं बने वरन् आने वाली पीढ़ियों के प्रेरणा श्रोत भी बने।''[2]

---

1 महाश्वेता देवी, झांसी की रानी, पृष्ठ:167

2 युगनिर्माण योजना, लेखः 'महतों–जो परिवार जो अनीति से जूझ पड़ा', सितंबर 1972 पृ0–61